दैनिक भास्कर

Date:24-08-19

अब वक्त हो चला है "बॉडी इंटेलिजेंस" बढ़ाने का

देश को स्वस्थ बनाने के लिए हर एक को जागरूक होना होगा, सरकार सभी को स्वस्थ नहीं रख सकती

रोहिणी निलेकणी , (फाउंडर और चेयरपर्सन, अर्घ्यम)

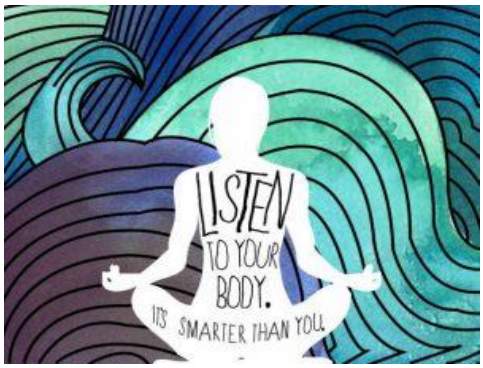

पतंजलि योगसूत्र का एक सुंदर कथन है हेयं दुखम् अनागतम, अर्थात दुख आने से पहले ही उसे रोक देना चाहिए। शायद इसी से प्रेरित होकर आधुनिक योग के प्रणेता गुरुजी बी के एस आयंगर ने कहा होगा कि शरीर मेरा मंदिर है और आसन मेरी प्रार्थना। आखिरकार हमारा शरीर ही हमारी असली पूंजी है, जो ताउम्र हमारे साथ रहती है। हालांकि देश का स्वास्थ्य उतना दुरुस्त नहीं है। डब्ल्यू एच ओ के मुताबिक भारत में औसत उम्र 68.8 वर्ष है जो हमें 195 देशों की सूची में 125 नंबर पर रखती है। उदाहरण के लिए गैर संक्रामक रोगों का प्रतिशत भारत में होने वाली बीमारियों में बढ़ता जा रहा है। देश में डायबिटीज के 5 करोड़ रोगी हैं, जिनकी संख्या 2030 तक 8 करोड़ के चिंताजनक आंकड़े को पार कर जाएगी। सभी जानते हैं कि ये जीवनपर्यंत बनी रहती है और अपने साथ गुर्दे, धमनियों, आंखों और हृदय संबंधित रोग लेकर आती है। विशेषज्ञों का मानना है कि सही दिनचर्या, व्यायाम और खानपान के जरिये इससे बचा जा सकता है या कम से कम इस पर काबू रखा जा सकता है। दुर्भाग्यवश सही खानपान और व्यायाम उतना आम नहीं है, जितना होना चाहिए। खास तौर पर शहरी इलाकों में व्यायाम के लिए समय निकालना और जगह मिलना मुश्किल है। सही खानपान भी उतना आसान या फिर किफायती नहीं होता। ताजे और सुरक्षित फल-सब्जियां या प्रोटीन काफी महंगे हैं। और शकर-वसा से भरपूर गैर पौष्टिक खाना मिलना ज्यादा आसान भी है।

देखा जाए तो इन दिनों एलीट क्लास के पास ही स्वास्थ्य चुनने की लग्जरी बाकी है। ये पुराने जमाने से बिल्कुल अलग है जब अमीरों के शौक में चर्बी और मीठा खाना शामिल था और वे लोग मोटापे को गर्व के साथ स्वीकार करते थे। आज जो सुपर रिच हैं वे अपने स्वास्थ्य से जुड़े मसलों को लेकर बेहद सचेत हैं। कई अपनी फिटनेस को उतनी ही तवज्जो देते हैं जितनी अपनी संपति को। इस हद तक कि उनके लिए एक्सरसाइज और खानपान का ध्यान रखना सनक बन जाता है। इसी बीच, लाइफस्टाइल से जुड़ी बीमारियां तेजी से समाज की आर्थिक सीढ़ी में नीचे की ओर खिसक रही हैं। दिल और फेफड़े से जुड़ी बीमारियां डायबिटीज के साथ मिलकर हर साल भारत में 40 लाख लोगों की जान ले लेती हैं। दुखद है कि ये असामयिक मौतें 30-70 वर्ष के लोगों की होती हैं। क्योंकि गैर संक्रामक रोगों ने हमारे देश में ज्यादातर देशों से एक दशक पहले घुसपैठ कर ली है। इनमें से कई स्वास्थ्य संबंधी मसलों की रोकधाम संभव हैं जिसके लिए जागरूकता ही उपाय है। भारत भाग्यवादी संस्कृति को मानने वाला देश है। कई बार हम अपने शरीर की नियति को अलग-अलग

भगवानों के भरोसे छोड़ देते हैं। भारत में कई लोग डॉक्टर और अस्पताल से दूर रहते हैं। यह तब तक चल रहा था जब प्राकृतिक उपचार की संस्कृति जीवित थी। आज स्थानीय स्वास्थ्य जानकारियों की व्यवस्था विलुप्त होती जा रही हैं। मेरी नानी जिन पौधों से घरेलू नुस्खे तैयार करती थीं ऐसे 5% पौधों को भी मैं नहीं पहचानती। जंगल और आदिवासी इलाकों में भी मैंने ऐसे युवा देखे हैं जो उन जड़ी, बूटियों को नहीं पहचानते जिनसे उनके पुरखे दवाइयां तैयार कर बीमारियां दूर कर देते थे।

बल्कि, अब मुझे लगता है कि हम अपने स्वास्थ्य को सरकार या फिर कई बार बाजार के हवाले कर देते हैं। हम उम्मीद करते हैं कि सरकारी अस्पताल या फिर प्राइवेट डॉक्टर हमारी छोटी से छोटी बीमारी के लिए मौजूद रहें । कितने ऐसे लोगों को हम जानते हैं जो बुखार या खांसी का पहला लक्षण नजर आते ही क्लीनिक या फिर फॉर्मेसी की दुकान को दौड़ पड़ते हैं? फिर मरीजों की लंबी लाइनों से थके डॉक्टर भी यूं ही कोई लक्षणसूचक राहत सुझा देते हैं। कई मरीजों को ये भी नहीं मालूम होता कि उन्हें क्या दवाई दी गई है। हम बेइंतहा भरोसा करते हैं या फिर शरीर से अजीबोगरीब अनासक्ति रखते हैं। फिजिशियन का लिखा लोग बड़े आज्ञाकारी ढंग से खरीदते भी हैं और गटक भी लेते हैं। और इस बात से इंकार नहीं कर सकते कि उन्हें आराम भी मिल जाता है। पर जरूरत ये है कि हम जो दवाई अपने शरीर में डाल रहे हैं इसे लेकर हम चिंता करें और थोड़े जिज्ञासु भी बनें। शायद समय आ गया है "बॉडी इंटेलिजेंस बढ़ाने का। आखिरकार स्वास्थ्य नागरिकों से जुड़ा मसला है और समाज का मुद्दा भी। एंटी-बायोटिक्स प्रतिरोध इस बात का बेहतरीन उदाहरण है। जब हम एंटी-बायोटिक्स का कोर्स पूरा नहीं करते तो हम बैक्टीरिया को लेकर प्रतिरोध खड़ा करने के जिम्मेदार होते हैं और फिर यह सामाजिक मसला बन जाता है। आजकल हमारी हवा, पानी और मिट्टी में मौजूद ड्रग प्रतिरोध वाले बैक्टीरिया भी बढ़ते जा रहे हैं। गंभीर बात यह है कि बाजार में नए एंटी-बायोटिक्स की खोज धीमी हो गई है। हम जल्दी ही एंटी-बायोटिक की खोज के पहले वाले काल में पहुंचने वाले हैं। इससे बेहतर समय और क्या होगा जब हम अपनी बीमारियों और उनके इलाज को लेकर ज्यादा से ज्यादा जान लें। हमारी उंगलियों की पहुंच में अब हर तरह का मुफ्त मेडिकल नॉलेज है। बाजार में अपनी बीमारी का पता लगाने के लिए बहुत सी डिजिटल सुविधाएं आ रही हैं। 10-19 साल के बीच के 2.5 करोड़ भारतीय किशोर तकनीक खासकर मोबाइल फोन को लेकर सहज हैं, उनके लिए स्वास्थ्य से जुड़ी चीजों को अपना लेना आसान होगा।

वयस्कों में 33% बीमारियां और 60% असामयिक मौतों का संबंध किशोरावस्था के उनके व्यवहार और स्थितियों से संबंधित होता हैं। यदि भारत में किशोरों के स्वास्थ्य में सुधार लाया जाए तो यह युवाओं को लिए खुद ब खुद अच्छा होगा। यह देश को स्वस्थ और बेहतर कामकाजी जनसंख्या भी देगा। क्योंकि भले हम आज युवा देश हैं लेकिन 2050 तक हमारी 20% जनसंख्या 60 वर्ष के पार वालों की होगी। आखिर सरकार क्या कर सकती है उसकी एक सीमा है। आम बजट में इस साल सबसे ज्यादा हिस्सा मिलने के बावजूद यह कभी भी सभी को स्वास्थ्य नहीं दे सकता। तब तक नहीं जब तक नागरिक खुद अपने स्वास्थ्य को लेकर जागरुक न हों। इसलिए हमें गुरुजी की बात याद रखनी होगी। हमें सीखना होगा अपने शरीर से मंदिर जैसा व्यवहार करना होगा और अपने खानपान, व्यायाम के जरिए शरीर की प्रार्थना करनी होगी।

दैनिक जागरण

Date:24-08-19

अनुदारता से भरे उदारवादी

निरंजन कुमार , (लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं)

आजादी के बाद से ही बौद्धिक-अकादमिक और विश्वविद्यालयी विमर्शों में लेफ्ट-लिबरल यानी वामपंथियों-उदारवादी बुद्धिजीवियों का एकाधिकार रहा है जिन्होंने शिक्षा-ज्ञान, पाठ्यक्रमों और बौद्धिक विमर्शों में एक खास एजेंडा के तहत उसके स्वरूप को एक तरह से अ-भारतीय कर दिया। पिछले कुछ समय से वामपंथियों की पकड़ थोड़ी ढीली पड़ी है, लेकिन तथाकथित उदारवादियों का कब्जा बरकरार है।

वामपंथियों- उदारवादियों के बरक्स एक वैकल्पिक भारतीय मॉडल स्थापित करने की कोशिश को ज्यादा कामयाबी नहीं मिल पाई। इसका एक बड़ा कारण है भारतीय मॉडल की वकालत करने वालों में विजन का अभाव। इसकी वजह से वे वामपंथियों-उदारवादियों के बनाए सैद्धांतिकी एवं पारिभाषिक शब्दावलियों के भ्रमजाल में ही फंस कर रह जाते हैं। इसका एक अच्छा उदाहरण है उनकी वैचारिक शब्दावली लिबरल और लिबरलिज्म। यूरोप में उदारवाद की सैद्धांतिकी का उदय सामंतवाद के पतन के साथ हुआ जिसमें व्यक्ति की स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति की आजादी और सहिष्णुता आदि की वकालत की गई। ब्रिटिश दार्शनिक जॉन लॉक उदारवाद के जनक माने जाते हैं। आगे चलकर जेएस मिल, टीएच ग्रीन आदि के प्रभाव से उदारवाद के अंतर्गत तर्कबुद्धि और विवेकशीलता, बहुलतावाद के साथ-साथ कल्याणकारी राज्य के सिद्धांत को भी शामिल किया गया। पश्चिमी परिवेश में उपजे उदारवाद के भारतीय प्रवक्ता अपनी मान्यताओं-सिद्धांतों का विरोध करने वालों को अनुदारवादी एवं संकीर्ण मानते हैं। विडंबना यह है कि उनकी इस मान्यता को भारतीय या राष्ट्रवादी मॉडल के विचारक भी स्वीकार कर बैठे हैं। एक तरफ तथाकथित लिबरलिज्म का मॉडल है जो कथित तौर पर श्रेष्ठ है, दूसरी तरफ भारतीय चिंतन-परंपरा है जो अनुदार एवं संकीर्णतावादी और इसलिए निम्नतर है। यह समझ न सिर्फ भ्रामक है, बल्कि भारतीय चिंतन-परंपरा के लोगों में एक हीनभावना का संचार करती है। यहां सवाल पूछना चाहिए कि क्या तथाकथित भारतीय लिबरल सचमुच उदारवादी हैं? क्या भारतीय मॉडल के विचारक अनुदार एवं संकीर्णतावादी हैं?

स्वतंत्र अभिव्यक्ति उदारवाद का प्रमुख लक्षण है। इस चीज को पश्चिम से आक्रांत भारतीय लिबरल विचारक ऐसे गौरवान्वित करते हैं जैसे वे एक नई- अनोखी अवधारणा प्रस्तुत कर रहे हों। पश्चिम में यह जरूर अनोखा था, जहां सामंती और चर्च व्यवस्था ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को कुचलने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी।प्राचीनकाल में जहां तरुणों को बिगाड़ने और नास्तिकता का आरोप लगाकर सुकरात को जहर दे दिया गया था, वहीं 1633 में वृद्ध गैलीलियो को उनकी मान्यताओं के कारण चर्च की ओर से कारावास दिया गया था, जबकि भारतीय समाज में अभिव्यक्ति की आजादी की सुदीर्घ प्राचीन परंपरा है। आदिग्रंथ ऋग्वेद में कहा गया है कि हम सब एक साथ आएं, आपस में बात करें, एकदूसरे को समझें। यही आचरण वंदनीय और श्रेष्ठ है। इसी तरह वैदिक 'न्याय दर्शन' में विचार-विमर्श के सूत्रों में 'वाद',

'जल्प' और 'वितंडा' का उल्लेख है जो संवाद-विवाद के विभिन्न रूप हैं। हमारे शास्त्रार्थ, खंडन- मंडन की परंपरा में स्त्रियों की भी सक्रिय भूमिका थी।

याज्ञवल्क्य एवं गार्गी अथवा आदि शंकराचार्य एवं भारती के बीच हुए शास्त्रार्थ जगप्रसिद्ध हैं। ऐसे में भारतीय चिंतन परंपरा को क्या माना जाए उदारवादी अथवा अनुदारवादी? जहां पश्चिम और पश्चिम-परस्त तथाकथित भारतीय उदारवादियों के बहुत पहले प्राचीन काल से ही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता या वाद-संवाद की प्रतिष्ठा है। वहीं दूसरी तरफ तथाकथित भारतीय उदारवादियों और उनके वामपंथी सहचरों के अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के दोहरे मानदंड की कलई तब खुल जाती है जब एमएफ हुसैन के प्रतिबंध पर तो वे हो-हल्ला मचाते हैं, लेकिन दूसरी तरफ तसलीमा नसरीन के मुद्दे पर मौन साध लेते हैं। उदारवाद का अन्य लक्षण है व्यक्ति की स्वतंत्रता, जो व्यापक अर्थ में व्यक्ति की पूर्ण सत्ता की प्रतिष्ठा है। दिलचस्प है कि यूरोप में व्यक्ति की स्वतंत्रता या प्रतिष्ठा के जो स्वर 17वीं-18वीं सदी में जाकर उठे, उसके बरक्स भारतीय परंपरा में व्यक्ति की प्रतिष्ठा या आजादी का उद्घोष प्राचीन काल से है। वृहदारण्यक उपनिषद का महावाक्य 'अहं ब्रह्मास्मि' अर्थात मैं ही ब्रह्म हूं, की व्याख्या व्यक्ति और व्यक्ति-स्वतंत्रता की प्रतिष्ठा है, जहां व्यक्ति में ही ईश्वर का निवास मान लिया गया है। इसी तरह शास्त्रों में उल्लिखित वाक्य 'यत् पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे'अर्थात जो ब्रह्मांड (संसार) में है वही पिंड (मनुष्य) में भी है। बहुलतावाद भी उदारवाद का एकमहत्वपूर्ण लक्षण है, लेकिन विसंगति यह है कि आजादी के बाद से शिक्षा- ज्ञान और पाठ्यक्रमों से लेकर बौद्धिक-सांस्कृतिक विमर्शों में इस बहुलतावाद को ढूंढा जाए तो एक निराशा होती है। इन सबमें भारतीय परिप्रेक्ष्य और भारतीय दृष्टिकोण शायद ही कहीं नजर आता हो। मिसाल के तौर पर पश्चिमी चश्मे के प्रभाव में हम कालिदास को भारत का शेक्सपीयर और समुद्रगुप्त को भारत का नेपोलियन कहते हैं, जबकि कालक्रम, प्रतिभा और उपलब्धि में दोनों भारतीय ऊपर हैं। यहां तथाकथित भारतीय लिबरल अनुदारवादी दिखाई पड़ते हैं। एक विडंबना यह भी है कि हमारे तथाकथित बुद्धिजीवियों को बहुलतावाद का सबक पश्चिम में ही दिखाई पड़ता है, जबकि ऋग्वेद के 'एकं सत् विप्रा: बहुधा वदंति' अर्थात सत्य एक है, परंतु ज्ञानी उसे विभिन्न तरीकों से व्याख्या करते हैं, से बड़ा बहुलतावाद का संदेश और क्या होगा?

वायु पुराण में उल्लिखित है 'मुंडे मुंडे मतिर्भिन्ना' और 'नवा वाणी मुखे मुखे' अर्थात जितने मनुष्य हैं, उतने विचार हैं। एक ही घटना का बयान हर व्यक्ति अपने-अपने तरीके से करता है। तर्कबुद्धि और विवेकशीलता उदारवाद का एक अन्य लक्षण है। उदारवादी किसी भी समस्या को अड़ियल या पूर्वाग्रह नजरिये से नहीं देखता। इस कसौटी पर तथाकथित भारतीय उदारवादी फिर बेनकाब हो जाते हैं। इसका उदाहरण तीन तलाक और फिर कश्मीर के मसले पर उनके कुतर्कों में देखा जा सकता है। पश्चिमी कसौटियों पर भी भारतीय चिंतन पद्धति पूर्ण उदारवादी है। हमारे तथाकथित लिबरल तो सही मायने में उदारवादी हैं ही नहीं, वे छद्म उदारवादी हैं। असली लिबरल तो भारतीय चिंतन है।